इकाई 9 सृष्टि रचना

इकाई की रूपरेखा

9.0 अधिगम प्रतिफल

9.1 प्रस्तावना

9.2 कालगणना में सृष्टि रचना का महत्त्व

9.3 सृष्टि रचना की भारतीय अवधारणा

9.4 सृष्टि रचना की प्रक्रिया और काल

9.5 जड़, प्राणी और मानव सृष्टि

9.6 बोध/ अभ्यास प्रश्न

9.7 सारांश

9.8 शब्दावली

9.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

9.0 अधिगम प्रतिफल

इस इकाई के अध्ययन से हम निम्न बातें जान सकेंगे –

- कालगणना में सृष्टि रचना के विज्ञान का क्या महत्त्व है?
- सृष्टि रचना की भारतीय अवधारणा क्या है?
- भारतीय अवधारणा में ब्रह्मांड की सृष्टि होने की प्रक्रिया क्या है?
- मानव सृष्टि के संबंध में भारतीय अवधारणा क्या है?

9.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में हमने देखा कि काल का संबंध सृष्टि से है। आखिर मानव ही काल को अनुभव करता है और वह इस सृष्टि का ही हिस्सा है। हमने यह भी पढ़ा कि सृष्टि की अवधारणा पर ही काल की अवधारणा भी अवलंबित है। अतः इस इकाई में हम सृष्टि की अवधारणा तथा कालगणना में यह अवधारणा कैसे उपयोगी है? अर्थात् सृष्टि रचना की अवधारण काल गणना को किस रूप में प्रभावित करती है ? यह सब पढेंगे।

9.2 कालगणना में सृष्टि रचना का महत्त्व

काल की उत्पत्ति सृष्टि की उत्पत्ति से जुड़ी है। स्वाभाविक सी बात है कि सृष्टि रचना के विज्ञान को समझने से ही कालगणना को समझना संभव होगा। यह हम पिछली इकाइयों में पढ़ चुके हैं कि भारतीय अवधारणा में काल को ब्रह्म भी कहा है। महाकाल को

ही सृष्टि का निर्माता भी कहा है। इस प्रकार सृष्टि और काल परस्पर संबद्ध हैं। काल की गणना का प्रारंभ सृष्टि के रचना से किया जाता है, परंतु यह गणना करता मानव ही है। इसलिए मानवोत्पत्ति के बाद ही यह कालगणना विधिवत् प्रारंभ होती है। मानवोत्पत्ति से पूर्व की कालगणना भारतीय विधा में ईश्वरीय ज्ञान वेद के आश्रय मानी गई है। उसके आधार पर ऋषियों द्वारा गणना की जाती है। आधुनिक पश्चिमी विज्ञान उसे अमान्य कर अपने अनुमान लगाता है। अंतरिक्ष में स्थित विभिन्न उपकरणों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर की गई कल्पनाओं के आधार पर सृष्टि की कालगणना की जाती है। इससे पूर्व पश्चिम में बाइबिल में वर्णित सृष्टि की रचना की अवधारणा प्रचलित रही है। यह हम पिछली इकाइयों में पढ़ चुके हैं कि बाइबिल की अवधारणा और आधुनिक विज्ञान की अवधारणाओं में एक समानता है और वह है सृष्टि के काल को एकरैखिक मानना।

इन दोनों ही प्रकार की कालगणनाओं में एक बात स्पष्ट है कि ब्रह्मांड की कालगणना करने में सृष्टि की रचना कैसे हुई, यह बात महत्त्वपूर्ण है। भारतीय और पश्चिमी दोनों ही अवधारणाएं सृष्टि के मूल तत्त्वों को पहचानने का प्रयास करती हैं। सृष्टि के मूल तत्त्वों की उत्पत्ति और विनाश की प्रक्रिया ही समस्त कालगणनाओं का मूल है। यह हम आगे देखेंगे कि सृष्टि की रचना की प्रक्रिया से काल की अवधारणा भी प्रभावित होती है।

9.3 सृष्टि रचना की भारतीय अवधारणा

सृष्टि रचना की भारतीय अवधारणा वेदों से प्रसूत होती है। सृष्टि कैसे हुई, इस बारे में ऋग्वेद के एक सूक्त में कई प्रश्न करते हुए उनके उत्तर दिये गए हैं। ऋग्वेद का यह सूक्त नासदीय सूक्त के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसके प्रारंभ में **'नासदासीन्नो'** यानी प्रारंभ में न तो सत् था और न ही असत्, कहा गया है। वेदों के आधार पर समस्त भारतीय अवधारणाओं में ईश्वर द्वारा सृष्टि की रचना किया गया माना जाता है। उपनिषदों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि **'सो कामयत् बहुस्यां प्रजायेयेति'** (तैत्तिरियोपनिषद् शिक्षा वल्ली), **'या फिर तदैक्षत् बहुस्यां प्रजायेयेति'** (छांदोग्योपनिषद् 6/2/1) अर्थात् ईश्वर की इच्छा या संकल्प ने प्रजा यानी सृष्टि की उत्पत्ति हुई। यह सिद्धांत इतना मान्य है कि ब्रह्मसूत्रों में ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए सृष्टि की रचना होने को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वहाँ कहा है – **'जन्मायदस्य यतः'** यानी जिससे यह सृष्टि उत्पन्न और नष्ट होती है।

आधुनिक विज्ञान के सिद्धांत में ईश्वर को अमान्य कर दिया गया है। हालाँकि ऐसा वहाँ बाइबिल और पोप की सत्ता के विरोध में किया गया है, परंतु इससे उसके सिद्धांतों में एक अधूरापन आ गया है। इतना ही नहीं, पाश्चात्य विज्ञानी व्यक्तिगत रूप से ईश्वर को मानते ही हैं, परंतु वे स्वयं द्वारा स्वीकारे गये सत्य को अपने सिद्धांतों में अभिव्यक्त करने का साहस नहीं दिखा पा रहे हैं।

ईश्वर द्वारा सृष्टि की रचना किये जाने के सिद्धांत को मानने के कारण भारतीय अवधारणा में सृष्टि के मूल तत्त्वों को पहचानना सरल हो जाता है। इतना ही नहीं, ईश्वर की उपस्थिति के कारण सृष्टि के रचना की निरंतरता को समझना और समझाना भी सरल हो जाता है। जैसा कि ऋग्वेद के अघमर्षण सूक्त में कहा गया है –

सूर्याचंद्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्, दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथोस्वः।

अर्थात् जैसे ईश्वर ने पूर्व में रचना की थी, उसी प्रकार इस बार भी अथवा हर बार सूर्य, चंद्र, पृथिवी, अंतरिक्ष तथा उसके अन्यान्य पिंडों की रचना की है अथवा करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सृष्टि की रचना कोई पहली बार नहीं हो रही है और न ही अंतिम बार हो रही है। यह पहले भी हो चुकी है और आगे भी फिर होगी।

वैदिक ऋषियों ने स्पष्ट रूप से बताया है कि अज्ञानता अथवा जड़तत्व से सृष्टि की उत्पत्ति नहीं हुई है, बल्कि इसकी उत्पत्ति चेतन तथा विज्ञानमय सत्ता से हुई है। तैत्तिरीयोपनिषद् में ही कहा है –

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यजानात्।
विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति। – (भृगु वल्ली)

वहाँ स्पष्ट कहा है कि विज्ञान ही ब्रह्म है और उससे ही समस्त भूतों यानी सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। यह वर्णन यह स्पष्ट करता है कि ब्रह्म विज्ञानमय है, वह अज्ञानमय नहीं हो सकता और उसे तप यानी काफी परिश्रम करने से ही जाना जा सकता है।

यह बात यूरोपीय विज्ञानियों के ध्यान में भी आने लगी है। वर्तमान में सृष्टि रचना के संबंध में वहाँ अव्यवस्था से व्यवस्था की रचना का सिद्धांत प्रचलित है। परंतु वहाँ के क्वांटम विज्ञानियों को यह ध्यान में आने लगा है कि यह सिद्धांत सटीक नहीं है। इसका एक प्रमुख उदाहरण हैं- इरविन श्रोडिंजर जोकि क्वांटम फिजिक्स के एक बहुत ही प्रसिद्ध नाम हैं। क्वांटम वेब समीकरण के जन्मदाता श्रोडिंजर अपने एक व्याख्यान जोकि 'व्हाट इज लाइफ' नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित है, में कहते हैं, "जीवन में प्राप्त व्यवस्थितता किसी भिन्न स्रोत से आती है। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यवस्थित घटनाक्रम को उत्पन्न करने के दो भिन्न तंत्र हैं – सांख्यिकी तंत्र जो कि अव्यवस्था से व्यवस्था उत्पन्न करता है और एक नया तंत्र जो व्यवस्था से व्यवस्था को उत्पन्न करता है। किसी भी पूर्वाग्रहमुक्त मस्तिष्क के लिए दूसरा सिद्धांत एकदम सरल और अधिक प्रशंसनीय प्रतीत होगा। यही कारण है कि भौतिकीविद् दूसरे विकल्प अव्यवस्था से व्यवस्था को चुनने में अहंतुष्टि अनुभव करते हैं, जोकि केवल प्रकृति में पालनीय होता है और जो प्राकृतिक घटनाओं की अपरिवर्तनीयता को समझने का एकमात्र साधन उपलब्ध कराता है। लेकिन हम यह अपेक्षा नहीं कर सकते हैं कि इससे निकाले गये भौतिकी के नियम जीवित वस्तु के व्यवहार को समझाने में सक्षम हो, जिसकी सबसे

महत्त्वपूर्ण विशेषता प्रत्यक्षतः अधिकांशतः व्यवस्था से व्यवस्था के सिद्धांत पर निर्भर दिखती है। आप दो पूर्णतः भिन्न तंत्रों से एक जैसे नियमों को प्रदर्शित करने की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं जैसे कि आप अपनी चाभी से पड़ोसी के ताले को खोलने की अपेक्षा नहीं कर सकते। इसलिए भौतिकी के सामान्य नियमों से जीवन की व्याख्या करने में आने वाली कठिनाइयों से हमें हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। हमें इसमें कार्यरत एक नए प्रकार के भौतिक नियमों को ढूंढने के लिए तैयार होना चाहिए। या फिर हमें इसे अभौतिक या फिर पराभौतिक नियम कहना चाहिए?"[1]

श्रौडिंजर व्यवस्था से व्यवस्था की उत्पत्ति के सिद्धांत को अभौतिक अथवा पराभौतिक सिद्धांत नहीं मानते। वे बताते हैं कि प्राकृतिक घटनाओं में भी यह सिद्धांत काम करता है। इसके लिए वे क्वांटम भौतिकी के ही एक अन्य धुरंधर विज्ञानी मैक्स प्लांक को उद्धृत करते हैं। मैक्स प्लांक ने दो प्रकार के भौतिक नियमों की बात की थी – डॉयनेमिकल तथा स्टैटिस्टिकल यानी गतिशील और सांख्यिकीय नियम। श्रौडिंजर का मानना है कि ये दो नियम वास्तव में व्यवस्था से व्यवस्था और अव्यवस्था से व्यवस्था की उत्पत्ति के दो नियम के समान ही हैं। वास्तव में प्लांक की स्थापना थी कि बड़े स्तर पर घटने वाली घटनाओं के सांख्यिकीय नियम परमाणवीय स्तर की छोटी-छोटी घटनाओं के गतिशील नियमों से बनते हैं। श्रौडिंजर विविध उदाहरणों और व्याख्याओं के बाद जीवन के संबंध में दो निष्कर्षों पर पहुँचते हैं जिसके अनुसार 1. हमारा शरीर प्राकृतिक नियमों के अनुसार एक परिपूर्ण तंत्र के रूप में कार्य करता है और 2. अकाट्य प्रत्यक्ष अनुभवों से मैं जानता हूँ कि मैं ही इसकी गतिविधियों को संचालित करता हूँ, जिसके परिणामों को मैं जानता हूँ, और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसका पूर्ण उत्तरदायित्व न केवल मैं अनुभव करता हूँ, बल्कि लेता भी हूँ।[2] श्रौडिंजर आगे लिखते हैं कि एक कैथोलिक ईसाई सिद्धांत में यह ईशनिंदा और पागलपन वाला विचार है और इसलिए त्याज्य है। फिर वे इसे उपनिषदों के ज्ञान से जोड़ते हैं। वे लिखते हैं, "अपने आप में यह विचार नया नहीं है। मेरे ज्ञान में इसका प्राचीनतम विवरण लगभग 2500 वर्ष पहले मिलता है। प्रारंभिक उपनिषदों में जिनमें आत्मन् को ब्रह्म के रूप में पहचाना गया है यानी आत्मा की सत्ता उस सर्वव्यापक स्वयंभू सत्ता के समान बताई गयी है। यह भारतीय विचार में सन्निहित रहा है जो कि ईशनिंदा से कहीं परे है और दुनिया की घटनाओं में गहरी अंतर्दृष्टि की सर्वोत्कृष्टता को दर्शाता है।"[3]

यह एक उदाहरण है कि यूरोपीय विज्ञानी भी सृष्टि के निर्माण या रचना में ईश्वर की भूमिका को नकार नहीं पा रहे हैं परंतु चूँकि यूरोप में दर्शन का अभाव है और वहाँ की थियोलॉजी उन्हें वेदांत के सर्वव्यापक, निराकार ईश्वर की संकल्पना को स्वीकारने नहीं देती, इसलिए वे इस बात को खुल कर नहीं कह पा रहे हैं। हालाँकि फ्रिट्जॉफ काप्रा जैसे

[1] इरविन श्रौडिंजर, व्हाट इज लाइफ, 1967, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ 85-86

[2] वही, पृष्ठ 86-87

[3] वही, पृष्ठ 93

कुछेक विज्ञानियों ने ताओ ऑफ फिजिक्स जैसी पुस्तकों के माध्यम से कहने का प्रयास किया है, परंतु वह प्रयास वहाँ अभी काफी अल्प ही है।

9.4 सृष्टि रचना की प्रक्रिया और काल

वेदों तथा उपनिषदों में सृष्टि की रचना की एक प्रक्रिया दी गई है। वह प्रक्रिया अत्यंत तर्कसंगत और विज्ञानसम्मत है। इसका एक संकेत हमें इस रूप में प्राप्त होता है। ईश्वर के संकल्प से अंतरिक्ष की उत्पत्ति हुई। अंतरिक्ष से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से भूमि और भूमि से शेष समस्त सृष्टि उत्पन्न हुई (तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षा वल्ली)। इस बात को ही अन्यान्य ग्रंथों में भी कहा गया है। जैसा कि हम ऊपर अघमर्षण सूक्त में देख आए हैं, यह प्रक्रिया एक बार नहीं होती। यह प्रक्रिया बारंबार होती है। हरेक प्रलय के बाद होती है। प्रलय और सृष्टि में एक निश्चित अंतराल होता है, जिसे भारतीय शास्त्रों में रात्रि से संबोधित किया गया है। जो ब्रह्म की रात्रि है, वही प्रलय के बाद का अंतराल है। इस रात्रि के काल में प्रकृति अपनी मूलावस्था तथा साम्यावस्था में स्थित होती है। जीव सुषुप्तावस्था में होते हैं। केवल ईश्वर चेतन और सक्रिय होता है। इसे ही नासदीय सूक्त में कुछ इन शब्दों में कहा गया है –

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्यौमा परो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम् ॥1॥

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः ।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास ॥ 2॥

अर्थात् सृष्टि के निर्माण से पूर्व न तो सत् था, न असत् और न ही रजकण तथा व्योम था। यानी सब कुछ एकसार था, उसमें अवकाश नहीं था, न ही उसमें कोई विकृति थी जो सत् असत् के रूप में प्रकट होती। विकृति से अभिप्राय आज की शब्दावली में बिगाड़ से नहीं है, बल्कि परिवर्तित होने की सामर्थ्य से है। प्रकृति अचलावस्था में थी, इसलिए उसमें कोई परिवर्तन संभव नहीं था। एकमात्र ईश्वर की चैतन्य शक्ति स्वधा के रूप में उपस्थित थी।

पुराणों में वेदों के अघमर्षण सूक्त के विज्ञान के आधार पर इतिहास का वर्णन है। ध्यान रहे कि सृष्टि रचना के इतिहास और कालगणना का निर्देशन किन्हीं सिद्धांतों के आधार पर ही होता है, न कि प्रत्यक्ष प्रमाणों के आधार पर। आज भी जो प्रत्यक्ष अवलोकन किये जा रहे हैं, उनके निष्कर्ष निकालने के लिए पूर्व से निर्धारित किन्हीं सिद्धांतों का सहारा लिया जा रहा है। यह भी कहा जा रहा है कि जो सिद्धांत नियत किये जा रहे हैं, उनकी जाँच संभव नहीं है। वे केवल ब्रह्मांड में ही लागू होते हैं। यानी उन्हें केवल मानना ही एकमात्र उपाय है, चाहे वे तार्किक रूप से कितने भी असंगत साबित हों। ऐसे में आधुनिक विज्ञान के सिद्धांत हर कुछ दशक के बाद परिवर्तित होते रहते हैं।

प्रलय का काल पता चलने पर उसकी गणना करने का भी प्रयास ऋषियों ने किया। चूँकि इसमें अनुमान ही एक मात्र प्रमाण हो सकता था, इसलिए उन्होंने इसमें गणित का प्रयोग किया और जैसे प्रकृति में दिन और रात की व्यवस्था है, '**यत् पिंडे तत् ब्रह्माण्डे**' के सिद्धांत का उपयोग करते हुए उन्होंने उसी प्रकार सृष्टि रचना में दिन यानी सृष्टि का कालखंड और रात यानी प्रलय या विनाश का कालखंड की व्यवस्था प्रदान की। प्रतिशत के अनुसार सौ वर्ष का काल औसत मानकर फिर ब्रह्मा के दिन और रात यानी सृष्टि और प्रलय के कालखंडों की गणना की गई। यह गणना हम आगे की इकाइयों में पढ़ेंगे। सृष्टि के कालनिर्धारण की यह प्रक्रिया नितांत वैज्ञानिक गणितीय विधा पर आधारित है। इसमें कुछ भी काल्पनिक नहीं है, सिवाय काल के। जबकि आधुनिक विज्ञान की कालगणना में एक घटना बिगबैंग की ही नई कल्पना की गई है, जिसके मिथ्या साबित होने से उनकी पूरी कालगणना ही गड़बड़ा जाने वाली है।

9.5 जड़, प्राणी और मानव सृष्टि

भारतीय सृष्टि विज्ञान में जड़, प्राणी और मानव सृष्टि का भी एक निश्चित क्रम उपलब्ध है। दुर्भाग्य से यह सारा विज्ञान आज अध्ययन-अध्यापन से विलुप्त है। विज्ञान के विद्यार्थियों को भी यह नहीं पढ़ाया जाता है। हम यहाँ देखेंगे कि भारतीय सृष्टि विज्ञान में जड़, प्राणी और मानव की उत्पत्ति का क्रम कितना वैज्ञानिक और तार्किक है। इसके आधार पर न केवल कालगणना सरल हो जाती है, बल्कि उसे स्मरण रखना भी सहज होता है।

भारतीय सृष्टि विज्ञान में जड़ के निर्माण का अर्थ मूल कणों का निर्माण नहीं होता। भारतीय सृष्टि विज्ञान मानता है कि मूल कण कभी भी नष्ट नहीं होते। देखा जाए तो आधुनिक विज्ञान को भी यह स्वीकार करना पड़ता है। आखिर बिगबैंग जिसमें हुआ, वे तो सृष्टि की रचना से पूर्व से ही विद्यमान थे ही। वे तत्त्व कहाँ से आए तथा उनका निर्माण कैसे हुआ, यह तो आधुनिक विज्ञान बता नहीं पा रहा। भारतीय विज्ञान उन्हें मूल प्रकृति मानता है और उसे अनादि अनंत मानता है। इस संबंध में वेदों के नासदीय सूक्त में वर्णित विज्ञान की व्याख्या करते हुए श्वेताश्वतर ऋषि कहते हैं –

उद्गीतमेतत्परमं तु ब्रह्म तस्मिंस्त्रयं सुप्रतिष्ठाऽक्षरं च।
अत्रान्तरं ब्रह्मविदो विदित्वा लीना ब्रह्मणि तत्परा योनिमुक्ताः॥
श्वेताश्वतरोपनिषद् 1/7

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः।
अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः॥
श्वेताश्वतरोपनिषद् 4/5

अर्थात् तीन अक्षर ब्रह्म हैं जो सुप्रतिष्ठित हैं। इनको ब्रह्म रूप में जो जान लेता है, वह ब्रह्म में लीन होकर मुक्त हो जाता है। ऐसी एक अज (अजन्मा) है जो श्वेत-कृष्ण एवं

लोहितवर्णा है, जो निरन्तर अनेकरूपा प्रजाओं की सृष्टि करती जा रही है और उसका एक अज (पुरुष) उसके साथ प्रेम में साहचर्य सुखभोग करता है; जब कि दूसरा अज (पुरुष) समस्त सुखों के भोग को त्याग देता है। इस बात को ही ऋग्वेद **द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया**... कह कर तीन अनादि, अनंतों की चर्चा करता है।

इससे यह स्पष्ट है कि वेद और उपनिषद दोनों ही मूल प्रकृति के अस्तित्व को अनादि अनंत मानते हैं। यदि मूल प्रकृति अनादि अनंत है, तो फिर उसके विकार से उत्पन्न और नष्ट होने वाली सृष्टि केवल एक बार होकर नष्ट कैसे हो सकती है। स्पष्ट है कि यह सृष्टि बारंबार बनती है और बारंबार नष्ट भी होती है। निर्माण और विनाश का यह चक्र ही उस कालचक्र का निर्माण करता है, जिसकी चर्चा हम ब्रह्मा के वर्षों और उसके आगे की गणनाओं में करते हैं।

मूल प्रकृति से ब्रह्मांड के निर्माण और उसमें पृथिवी का निर्माण हो जाने के बाद प्राणी सृष्टि प्रारंभ होती है। प्राणी सृष्टि में भी प्रारंभ में उद्भिज यानी जमीन फाड़ कर उत्पन्न होने वाले स्थावर यानी पेड़-पौधे उत्पन्न होते हैं। उसके बाद स्वेदज यानी जल से उत्पन्न होने वाले जीव पैदा होते हैं, फिर अंडज यानी अंडों से उत्पन्न होने वाले और सबसे अंत में जरायुज यानी गर्भ में भ्रूण बनकर विकसित होने वाले जीव उत्पन्न होते हैं। यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि भारतीय मत में ये सभी भिन्न योनियां होती हैं, एक से दूसरा उत्पन्न नहीं हो रहा होता है, जैसा कि आधुनिक विकासवादी बताते हैं। जरायुज में भी सबसे अंत में मानवों की सृष्टि होती है। भारतीय वैदिक मत में प्रारंभिक मानवों पूरी तरह विकसित, युवा और ज्ञानवान थे। उनकी सामर्थ्य भी आज के मानवों से अधिक थी और इसलिए वे सृष्टि के ज्ञान को समझने और उसे प्रकट करने में सक्षम थे। ऐसे सक्षम मानवों को ही ऋषि कह कर संबोधित किया गया।

इसलिए भारतीय ज्योतिष का मत है कि प्रारंभिक मानवों के उत्पन्न होने के समय से ही ऐतिहासिक काल की भी गणना की जाने लगी। आज वह गणना हम सृष्टि संवत के नाम से जानते हैं। इनके बारे में हम विस्तार से अगली इकाइयों में पढ़ेंगे।

9.6 बोध/अभ्यास प्रश्न

1. काल की अवधारणा किस पर अवलंबित है?
2. भारतीय विधा में मानव-उत्पत्ति से पूर्व कालगणना का आश्रय क्या है?
3. कालगणना के विषय में बाइबिल व आधुनिक अवधारणाओं में क्या समानता है?
4. समस्त कालगणनाओं का मूल क्या है?
5. ऋग्वेद में सृष्टि-रचना का वर्णन कहां मिलता है?
6. नासदीय सूक्त के नामकरण का आधार क्या है?
7. वेदों के आधार पर/भारतीय अवधारणा में सृष्टि का रचनाकार कौन है?

8. आधुनिक विज्ञान के सिद्धांत में ईश्वर को अमान्य करने का क्या कारण है?
9. उपनिषद् के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति किससे हुई है- अज्ञान से अथवा विज्ञान से?
10. तैत्तिरीय-उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म का स्वरूप क्या है?
11. वर्तमान में सृष्टि रचना के संबंध में यूरोपीय वैज्ञानिकों का क्या सिद्धांत प्रचलित है?
12. इरविन श्रोडिंजर कौन हैं?
13. इरविन श्रोडिंजर के अनुसार व्यवस्थित घटनाक्रम को उत्पन्न करने के तंत्र कौन-कौन से हैं?
14. व्यवस्थित घटनाक्रम के उत्पत्ति के कारक दो तंत्रों में से इरविन श्रोडिंजर किस तंत्र को उत्पत्ति का उचित कारक मानते हैं?
15. मैक्स प्लांक के भौतिकी के नियम क्या हैं?
16. मैक्स प्लांक के अनुसार बड़े स्तर पर घटने वाली घटनाओं के सांख्यिकीय नियम कैसे बनते हैं?
17. इरविन श्रोडिंजर के विचार का साम्य /अनुमोदन किस भारतीय ग्रंथ से/में मिलता है?
18. तैत्तिरीय-उपनिषद् के अनुसार सृष्टि-उत्पत्ति के क्रम में सर्वप्रथम क्या उत्पन्न होता है?
19. वायु की उत्पत्ति किससे होती है?
20. वायु से क्या उत्पन्न होता है?
21. भूमि की उत्पत्ति का कारण क्या है?
22. वेदानुसार क्या सृष्टि-निर्माण की प्रक्रिया एक बार ही होती है?
23. ब्रह्म की रात्रि क्या है?
24. प्रलयकाल में प्रकृति का स्वरूप क्या है?
25. प्रलयकाल में जीव किस अवस्था में होता है?
26. नासदीय सूक्त के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व प्रकृति किस अवस्था में थी?

9.7 सारांश

उपरोक्त विवरण से हमें यह स्पष्ट हो गया होगा कि कालगणना का सृष्टि रचना के विज्ञान से बहुत ही घना संबंध है। बिना सृष्टि रचना के विज्ञान को समझे हम उसकी कालगणना को नहीं समझ सकते। इसलिए इतिहास की कालगणना में भी सृष्टि की रचना के इतिहास को अनिवार्य रूप से शामिल करना पड़ता है। जैसा हम ऊपर देख आए हैं, चूँकि सृष्टि का इतिहास विज्ञान से अधिक दर्शन का विषय, इसलिए प्रत्यक्ष

अवलोकनों पर अत्यधिक विश्वास करने वाला आधुनिक विज्ञान उसके रहस्यों को ठीक से समझ नहीं पा रहा है। यही कारण है कि उसकी कालगणना भी सीमित बनी हुई है। वह अभी भी बिगबैंग से न तो आगे देख पा रहा है और न ही पीछे।

9.8 शब्दावली

प्रसूत = उत्पन्न

सूक्त = एक विषय से सम्बंधित मन्त्रों का समूह

अमान्य = स्वीकार न करना

अन्यान्य = और दूसरे

प्रकृति की मूलावस्था/ साम्यावस्था = सत्, रज् और तम ये तीनों जब समान अनुपात में होते हैं तो उसे साम्यवस्था कहते हैं यही मूल प्रकृति है

व्योम = आकाश

निर्दशन = दिखाई देना

9.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ऐतिहासिक कालगणना, रवि शंकर, सेंटर फॉर सिविलाइजेशनल सोसाइटी, दिल्ली
- तैत्तिरीयोपनिषद्
- श्वेताश्वतरोपनिषद्
- ऋग्वेद
- व्हॉट इज लाइफ, इरविन श्रौडिंजर

बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सृष्टि की उत्पत्ति पर
2. ईश्वरीय ज्ञान वेद
3. सृष्टि के काल को एकरैखिक मानना।
4. सृष्टि के मूल तत्वों की उत्पत्ति और विनाश की प्रक्रिया।
5. नासदीय सूक्त में
6. क्योंकि इस सूक्त के प्रारंभ में नासद् शब्द प्रयुक्त है।
7. ईश्वर
8. बाइबिल व पोप की सत्ता का विरोध करना।

9. विज्ञानमय अथवा चेतन सत्ता से
10. विज्ञानमय
11. अव्यवस्था से व्यवस्था की रचना का सिद्धांत
12. क्वांटम फिजिक्स के सुप्रसिद्ध यूरोपीय भौतिकविद्, क्वांटम वेब समीकरण के जन्मदाता
13. सांख्यिकीय तंत्र, एक तंत्र जो व्यवस्था से व्यवस्था को उत्पन्न करता है।
14. दूसरे - व्यवस्था से व्यवस्था को उत्पन्न करने वाले तंत्र को
15. डायनेमिकल व स्टैटिस्टिकल नियम
16. परमाणवीय स्तर की छोटी-छोटी घटनाओं के गतिशील नियमों से
17. उपनिषद्
18. आकाश
19. आकाश से
20. अग्नि
21. जल
22. नहीं, बारंबार होती है।
23. प्रलय के बाद का अंतराल।
24. प्रकृति अपनी मूल-अवस्था अथवा साम्य-अवस्था में स्थित होती है।
25. सुषुप्त-अवस्था में
26. अचलावस्था में/साम्यावस्था में